बात साहित्य को विजयदांन देथा का योगदान

*डॉ. गोकुल चन्द सैनी

विजयदांन देथा अपने आप में एक पूरी संस्था ही नहीं, राजस्थानी भाषा के ऐसे विरले कथाकार भी है, जिन्हें युगनिर्माता कहा जा सकता है। वह कहानियाँ सुनाते हैं और सैकडों की संख्या में बैठ कर लोग उनसे सुनते है। जिन्होंने उनके मुख से मूल राजस्थानी में उनकी कहानियाँ सुनी हैं, वे राजस्थानी भाषा के सौन्दर्य और अद्वितीय प्रवाह के साक्षी हैं। 'बातां री फुलवाड़ी' नाम से सात सौ कहानियों का संग्रह तेरह खण्डों में संयोजित है। उन में से चुनी हुई कहानियों का हिन्दी रूपान्तर राजकमल प्रकाशन में चार खण्डों में प्रकाशित हुआ है।दुविधा और अन्य कहानियाँ' पहला खण्ड है। ढ़ाई सौ पृष्ठों के इस पहले खण्ड में कोई इक्कीस कहानियाँ हैं। एक–से–एक निराली और एक साँस में पढ़ी जानी योग्य 'दुविधा' पर मणि कौल ने एक फिल्म भी बनायी है।

आज तमाम लिखी जाने वाली कहानियों में इन कहानियाँ का पढ़ना एक अनूठा, दुर्लभ अनुभव ही नहीं, इस बात का सूचक भी है कि समसामयिक कहानियों का एक रास्ता इधर से भी जाता है–जो साफ, चिकना और बेहद आकर्षक है। यह आकर्षक रोचकता का ही आकर्षण नहीं, बल्कि मूल में ऐसे चिन्तन का भी आकर्षण है, जो मध्ययुगीन सामन्ती मूल्यों पर चोट करता है, सत्ता–व्यवस्था और उसके चाटूकारों का नंगा करता है, स्त्री और पुरूष के संबन्धों की असमानता पर नश्तर लगाता है। इस तरह ये कहानियाँ लौक कथाओं की बुनावट रखते हुए भी आधुनिक तेवर रखती है।यानी पाठक राजे–रजवाड़ों की गलियों में घूमते हुए भी आज के नेताओं और मन्त्रियों से साक्षात् करता है और अपने पैरों में लगी सामन्ती–व्यवस्था की धूल को आज की लोकतन्त्री व्यवस्था की कीचड़ में बदला हुआ देखता है।

उनकी कहानियाँ आज की कहानी यात्रा पर नये तरह से सोचने को विवश करती है और इतना तो संकेत करती ही हैं कि कथा के पुराने उपकरण इतने बेजान नही हो गये हैं, जितना कि समझा जाता है। यदि उनका सही, दक्षतापूर्ण इस्तेमाल किया जाये तो कहानी को नयी ताकत मिलेगी और वह ताकत ऐसी होगी जो हर तरह के पाठक को बाँधने में समर्थ होगी। आगे आने वाली कहानी का रास्ता इनलोक–कथाओं और लोक–अभिप्रायों से होकर है। बशर्ते लेखक की दृष्टि आधुनिक और समसामयिक हो। विजयदांन देथा की इन कहानियों से नये कहानी लेखक बहुत–कुछ सीख सकते हैं और पाठकों के लिए तो यह अनमोल खजाना है। इस सम्बन्ध में सर्वेश्वर दयालसक्सेना ने लोक संस्कृति–दिसम्बर 2005 के अंक में कहा है 'गर्मी–सर्दी, आँधी–तूफान की परवाह किये बगैर जिस तरह बीज की रखवाली में बीजूका पूरा जीवन बिता देता है ठीक उसी तरह विजयदांन देथा भी जोधपुर की रेत पर मानवीय संवेदना के बीज बचाने में दिन–रात खड़े है। देथा जी हिन्दी के उन कहानीकारों में से है जो लोक–कथाओं में प्रमथ्यू की तरह कहानी की एक छोटी–सी चिनगारी चुराते है और फिर उसे समकालीन जीवन की विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, लोक राग और लोक आग में तपाकर एक ऐसी बेमिसाल कहानी के रूप में प्रस्तुत करते हैं कि पाठक ठगा–सा रह जाता है।1 " इनकी कहानियों की सबसे बडी बात यहें है कि इनमें आदि से अन्त तक पाठक को बाँधने का मात्र जादू ही नहीं है, अपितु इनमें आज के खतरनाक समय में हमारी दूँठ होती संवेदनाओं को सींचने की जीवन संघर्ष और जिजीविषा के द्न्द्व से उत्पन्न बेशुमार प्रश्नों से टकराने की अद्भुत जिन्दादिली, उर्जा,

ओज और एनर्जी है ।

सच कहूँ. तो विजयदान देथा की कहानियाँ लोक राग, लोक आग, लोक रंग, लोक गन्ध का खूबसूरत अजायबघर है। ऊपर से देखने पर देथा की कहानियाँ दादी–नानी की कहानियाँ लगती है जिनमें राजा–रानी है, पशु–पक्षी है, किन्तु ये कहानियाँ राजा–रानी,पशु–पक्षियों की कहानियाँ होकर भी समकालीन मनुष्य की बड़ी चिन्ताओं की कहानियाँ है। विजदांन देथा अपने लोक राग को, व्यापक जीवन सन्दर्भो से जोड़ते हुए जिस खास अन्दाजँ में ट्विस्ट देकर कहानी में रूपान्तरित करते है उस से वे कहानियाँ हमारे दिल और दिमाग में एक गहरी गहरी पैठ बनाती हैं। अमृता प्रीतम के शब्दों में कहें तो विजयदांन देथा लोक कहानियों की सूरत में कहानी बयान करते हैं और बीच में कहीं एक स्तर पर वह ऐसी बात कह जाते हैं कि कहानी का सार आयाम बदल जाता है। वह एकदम आज की कहानी हो जाती है। यह उनके पास बहुत खूबसूरत क्राप्ट है और यह सिर्फ क्राफ्ट ही नहीं है। इसके पीछे एक पूरी विचारधारा है, जो पुरानी बात करते हुए भी कहानी को शाश्वत कर देती है।

जिस तरह एक कुशल गायक लम्बे रियाज से अपनी आवाज साधता हैं ठीक उसी तरह देथा ने भी लोकजीवन के विभिन्न लोक छंदो का लम्बा रियाज करने के उपरान्त अपनी कहानियों के द्वारा लोकनाद उत्पन्न किया है– मानवीय रागात्मकता का नाद। उनकी सभी कहानियाँ ग्रामीण, रागात्मक बोध की कहानियाँ है– चाहे वह 'लजवन्ती' हो या 'इस्तीफा', 'आशा अमरधन' हो या 'जन्जाल' या फिर 'दूजौ कबीर' हो या अगस्त 2004 के 'नया ज्ञानोदय' में प्रकाशित 'भगवान की मौत' कहानी।

विजयदांन देथा की ये कहानियाँ रेगिस्तान में खड़े उस पेड़ की तरह है जिसके साथ शिखर दोपहर में हम अपनी पीठ टेक सकते है।हम छुपा सकते है पूरी तरह उसके नीचे अपने आप को। ये कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि मनुष्य और कहानी का जो रिश्ता हजारों सालों से चला आ रहा है, वह आज भी जिन्दा है। मनुष्य के दुःख–दर्द,जीवन संघर्ष और जिजीविषा का यदि कोई इतिहास लिखना चाहे तो देथा की कहानियाँ शिलालेखों के रूप में काम आएँगी। हमारा भूत, वर्तमान और भविष्य देथा ने अपनी कहानियों में लिख दिया है।

आज का समय संचार आविष्कार और बाजार का समय है। यह समय विज्ञान और टेक्नालॉजी का है, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विज्ञान और टेक्नोलॉजी की न तो कोई विचारधारा होती है और न ही संवेदना ऐसे समय में रचना ही दृष्टि प्रदान करती है और मनुष्य की ठूँठ होती संवेदना को सींचती है। विजयदांन देथा इस विज्ञान और टेक्नालॉजी के नाम पर साम्राज्यवादी विकसित देशों के द्वारा पूरी दुनिया के विनाश की साजिश को साफ–साफ देखते है। लजवन्ती कहानी–संग्रह की भूमिका में वह लिखते है, आजकल पशुता के धुआँधार विस्तार का कोई पार नहीं। यह विज्ञान विकास और तकनीकी का अभिशप्त पहलू है, जिससे बचने का उपाय शायद ही कोई वैज्ञानिक, कोई साहित्यकार या कोई राजनेता कर सके।सन 2000 में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित अपने कहानी संग्रह उजाले के मुसाहिब' में यह कहते हुए भी नहीं चूकते कि "यदि मनुष्य का चरित्र दिन–ब–दिन भ्रष्ट हो रहा है, यदि लाल व नीली बत्तियों वाली जीपों की संख्या लगातार लगातार बढ़ रही है तो यह परिवर्तन, यह विकास और यह आसुरी सभ्यता सब बेमानी है। मनुष्य के उदात्त गुणों की कीमत पर ये तमाम पैशाचिक उपलब्धियाँ निरर्थक है और आज हम उसी अधः पतन का जश्न मना रहे हैं। आतंक के प्रति समर्पित हो रहे है। इस सहस्राब्दी के मुहाने पहुँचकर हमें अपने आप से सिर्फ यही प्रश्न करते है कि हमें फिर से सिकन्दर, नेपोलियन, नीरो, चंगेजखां, अहमदशाह अब्दाली, हिटलर, मुसोलिनी और ईदी अमीन की आवश्यकता है या गौतमबुद्ध, महावीर, ईसामसीह, संत फ्रांसिस, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर या मदर टेरेसा की ? यदि सहस्राब्दी की यह रफ्तार रही तो फिर से इन्हीं तानाशाहों का, इन्हीं शैतानों का मृत्यु के इन्ही सौदागरों का आविर्भाव होगा, जिनके स्वागत की हम जोश–खरोश के साथ तैयारी कर रहे हैं। उनके अभिनन्दन में

बावरे हो रहे। क्या इस सहस्राब्दी के उन्माद में आगामी विध्वंस की आहट तो नहीं छिपी ..... इतिहास अपनी क्रूरतम मंशाओं को किस रूप में वापस दुहराता है ? आज से करीब चार सौ शताब्दी पूर्व भारत को लीलने वाली ईस्ट–इण्डिया कम्पनी अब विश्व–व्यापार संगठन का छद्म रूप घर कर समूची दुनिया को लील जाने की भयंकर मंत्रणा कर रही है और वह भी मानवता के नाम पर, व्यावसायिक दुरभिसन्धियों का जाल रचा कर और हम किस मुगालते मे सहस्राब्दी का त्यौहार मनाने जा रहे है ? अब यह कतई जरूरी नहीं है कि सत्रहवीं सदी के उनमान स्वर्ण लोलुप पश्चिमी देशों का विभिन्न प्रदेशों पर भौगोलिक कब्जा हो। वे हमें आजाद रखकर भी पूर्णतया गुलाम बना सकते है। जो राजनीतिक गुलामी से कही ज्यादा शर्मनाक है। विजयदांन देथा की तमाम कहानियां इन्ही चिन्ताओं की उपज हैं।

जिस तरह प्रेमचन्द उर्दू से हिन्दी कहानी की ओर आये थे और हिन्दी में आकर उन्होंने अपने बाद के कहानीकारों को बाध्य कर दिया था कि वे किसी और तरह से सोचें। उसी तरह विजयदांन देथा भी राजस्थानी कहानी से हिन्दी कहानी की ओर आये हैं और आज तमाम कहनीकारों के लिए उनकी कहानियाँ एक चुनौती हैं। एक बेहतर कहानी लिखने के लिए हमें निश्चित प से उनको क्रास कराना होगा। उनकी कहानियों को पढ़ने के उपरान्त हम यह कह सकते हैं कि विजयदांन देथा इस बात को पूरी तरह जानते हैं कि कहानी मूलतः पाठक केन्द्रित विधा है। वह इस गत को भी बखूबी जानते हैं कि कहानी के द्वारा पाठक को केसे बाँधा जा सकता है। मेरी दृष्टि में कहानीपन तथा कथा–रस की सघनता ही पाठक को मजबूत करती है। देथा की कुछ कहानियों को पढ़ते हुए ऐसा लगता है उन्होंने चेखव की उस बात को अच्छी तरह याद रखा है कि "लोगों और सिर्फ लोगों के बारे में ही लिखना बहुत उबाऊ काम है। यदि आपने लोगों के बारे में तीन कहानियाँ लिखी है तो चौथी कहानी घोड़े, कुत्ते या बिल्ली पर लिखिए। भले ही यह कहानी उन कहानियों से घटिया हो जिनमें लोगों के बारे में लिखा गया है, पर इसे बहुत रूचि के साथ पढ़ा जाएगा।लिखने की कला, लिखने की कला में निहित नही, लिखा गया उसकी कॉट–छाँट करने की कला में निहित है।

चेखव कहानी लेखन के सन्दर्भ में एक दूसरी बात की ओर भी इशारा करते हैं कि कहानी में कुछ भी आवश्यक नहीं होना चाहिए।यदि पहले हिस्से में आपने दीवार पर लटकी बन्दूक दिखाई है तो दूसरे या तीसरे हिस्से में उसे जरूर चलाना चाहिए। कहानी को जानदार बनाइए। वार्तलाप के बीच घटनाएँ होती रहनी चाहिए। इस सन्दर्भ में विजयदांन देथा की 'आशा अमरधन' कहानी को देखा जा सकता है जिस में पति–पत्नी के वार्तालाप के बीच एक के बाद दूसरी घटना घटती है और कहानी के अन्त में एक ऐसी अप्रत्याशित घटना घटती है कि पाठक उस त्रासदी से लम्बे समय तक उबर नहीं पाता। 'आशा अमरधन' बस की त्रासदी की इन्टेंसिटी 'तिरिछ' के बाद किसी दूसरी कहानी देखने को नहीं मिलती।

'आशा अमरधन', 'भगवान की मौत', 'सपनप्रिया', 'लजवन्ती', 'उलझन' तथा 'दूजौ कबीर' जैसी कहानियाँ न केवल विजयदांन देथा की, अपितु समकालीन हिन्दी कहानी की स्थायी उपलब्धि हैं। ये कहानियाँ भारतीय लोकरंगों और लोक देवताओं से बनायी गयी ऐसी पेन्टिंग्स है, जिनके सम्बन्ध में पिकासो की तरह कहा जा सकता है कि क्या ये तुमने बनायी है। ग्रामीण परिवेश को आधार बनाकर देथा जी नेजिस बात साहित्य का संवर्द्धन किया है, उसका बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान माना जा सकता है। किसान और मजदूर वर्ग की कहानियों के मामले में हम दरिद्रता की सीमारेखा के आस–पास ही है। इस दरिद्रता से मुक्ति दिलाने वाला प्रेमचन्द जैसा कोई मसीहा कथाकार समकालीन हिन्दी–कथा–परिदृश्य में दूर–दूर तक फिलहाल तो दिखता नही है।बेबस मन को त्राण मिलता है, तो सिर्फ राजस्थानी के प्रेमचन्द कहे जाने वाले तपस्वी कथाकार विजयदांन देथा उर्फ बिज्जी की कहानियों में। बिज्जी की कथा–सम्पदा इतनी विपुल है कि वे कथा के कुबेर लगते है। लोक कथा के रूप में बुनावट ऐसी की

बावरा मन बलिहार जाये, तेवर ऐसे कि जेट युगीन आधुनिकता को शर्म आने लगे और प्रहार की क्षमता ऐसी की अच्छी से अच्छी रचना भी धूल जाट जाये। बातें हो राजा–रानी, देवी–देवता और सेठ साहूकारों की, पर कलई खुले आज के मंत्रियों, सांसदों, विधायकों और सचिवों की। पठनीयता का आकर्षण ऐसा लगने लगे कि कहानी नीरस हो नहीं सकती। भारतीय जन–जीवन में पैठ इतनी शहरी कि भारतीय दर्शन और संस्कृति हाथ जोड़ते नजर आएँ। कुल मिलाकर आलम यह कि बिज्जी की कहानियों के हाथ में लोकतत्व की ऐसी लगाम है कि वे पाठकों को किसी भी दिशा में किसी भी गति से दौड़ा दे। समकालीन हिन्दी कहानियों की नीरसता के सन्दर्भ में बिज्जी की कहानियां मार्गदर्शक की भूमिका निभा सकती है।

***व्याख्याता– हिन्दी**
स्वामी विवेकानन्द राजकीय महाविद्यालय खेतड़ी

सन्दर्भ

1. लोक संस्कृति–दिसम्बर 2005, संपादक विजयदांन देथा, देथाकी देन, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना लोक जीवन का स्वरूप व विवेचन

संदर्भ

1. हलायुद्ध कोशः स. जयशंकर, पृष्ठ–502
2. हिन्दी शब्द कल्पद्रुम : स.प. रामनेश त्रिपाठी, पृष्ठ 634–35
3. लोक वार्ता विज्ञान (भाग–1) : डॉ. हरद्वारीलाल शर्मा, पृष्ठ–2
4. जनपद, वर्ष–1 : डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ–65
5. लोक वर्ता विज्ञान (खण्ड–2) : डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा, पृष्ठ–617
6. बातां री फलवाड़ी, भाग–8 : (भूमिका–कोमल कोठारी), पृष्ठ–2
7. राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा : अगरचन्द नाहटा, पृष्ठ–80
8. राजस्थानी लोक साहित्य : नानूराम संस्कृर्ता, पृष्ठ–13
9. भारतेन्दु युगीन हिन्दी काव्य में लोक तत्व : डॉ. विमलेश कांति, पृष्ठ–33